परमात्मा रूप का दर्शन करना चाहिए। प्राणीमात्र भगवान् का निवास, अर्थात् मन्दिर है; अतः जिस प्रकार भगवत्-मन्दिर का अभिवादन किया जाता है, वैसे ही परमात्मा के निवासस्वरूप प्राणीमात्र का यथोचित सम्मान करे; किसी का भी अपमान कभी न करे।

वर्तमान काल में ऐसे बहुत से निर्विशेषवादी हैं, जो मन्दिर-अर्चन का उपहास करते हैं। उनका तर्क है कि जब ईश्वर सर्वव्यापक है, तो उसे मन्दिर-पूजन तक सीमित क्यों किया जाय? इसके उत्तरस्वरूप कहा जा सकता है कि यदि ईश्वर सर्वव्यापक है, तो क्या वह मन्दिर अथवा अर्चाविग्रह में नहीं है? सविशेषवादी और निर्विशेषवादी इस प्रकार नित्य तर्क किया करें, परन्तु कृष्णभावनाभावित शुद्ध भक्त वास्तव में जानता है कि पुरुषोत्तम स्वयं भगवान् होने के साथ-साथ श्रीकृष्ण सर्वव्यापक भी हैं, जैसा **ब्रह्मसंहिता** द्वारा समर्थित है। अपने परमधाम गोलोक वृन्दावन में नित्य विराजते हुए भी अपनी विविध शक्तियों और अंशों के रूप में वे प्राकृत-अप्राकृत सृष्टिओं में सर्वत्र हैं।

मोघाशा मोघकर्माणो मोघज्ञाना विचेतसः ।
राक्षसीमासुरीं चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः ।।१२।।

मोघाशाः=व्यर्थ मनोरथ; **मोघकर्माणः**=निष्फल सकाम कर्म; **मोघज्ञानाः**=निष्फल ज्ञान; **विचेतसः**=मोहित; **राक्षसीम्**=राक्षस; **आसुरीम्**=अनीश्वरवादी; **च**=तथा; **एव**=निस्संदेह; **प्रकृतिम्**=स्वभाव को; **मोहिनीम्**=मोहकारी; **श्रिताः**=धारण किए हुए।

अनुवाद

जो इस प्रकार संमोहित हैं, वे आसुरी तथा अनीश्वरवादी स्वभाव को धारण किये रहते हैं। उस मोहमयी अवस्था में उनकी मुक्ति की आशा, उनके सकाम कर्म और उनके द्वारा अर्जित ज्ञान आदि सभी कुछ निष्फल हो जाता है।।१२।।

तात्पर्य

बहुत से मनुष्य अपने को कृष्णभावनाभावित और भक्तियोगी तो समझते हैं, परन्तु हृदय से भगवान् श्रीकृष्ण को परमसत्य नहीं मानते। उन्हें भक्तियोग के फल—भगवद्धाम की प्राप्ति कभी नहीं हो सकती। इसी प्रकार, जो भगवान् श्रीकृष्ण का उपहास करते हैं, वे सकामकर्मनिष्ठ व्यक्ति और मुमुक्षु ज्ञानी भी कृतार्थ नहीं हो सकेंगे। भाव यह है कि श्रीकृष्ण का तिरस्कार करने वालों को असुर अथवा अनीश्वरवादी जानना चाहिए। सातवें अध्याय के अनुसार, ऐसे आसुरभाव वाले दुष्ट श्रीकृष्ण के शरणागत नहीं होते। परतत्त्व की प्राप्ति के लिए वे जो कुछ भी मनोधर्मी करते हैं, उससे इसी असत् निर्णय पर पहुँचते हैं कि जीव और श्रीकृष्ण में कोई अन्तर नहीं है। इस भ्रमवश वे समझते हैं कि मनुष्य की देह इस समय केवल माया से ढक गई है और जैसे ही जीव इस देह से मुक्त होता है, वैसे ही उसमें और ईश्वर में कोई भेद नहीं रहता। श्रीकृष्ण से एक होने की यह मोहमयी चेष्टा अवश्य असफल रहेगी।